P.G.
SEM-III
Paper-14

प्रश्न :- काव्य की आत्मा रस है। रस के स्वरूप का विवेचन करते हुए उपर्युक्त स्थापना की यौक्तिक मीमांसा करें ?

उत्तर :- रसवादी आचार्य रस को काव्य की आत्मा मानते हैं 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' अर्थात् रसात्मक वाक्य ही काव्य है। 'रसो वै सः' इस वैदिक श्रुति के आधार पर रस को आनन्दस्वरूप ब्रह्म ही माना गया है। 'रस' के विषय में भारतीय समीक्षाशास्त्र का तो कहना ही क्या है क्योंकि प्राचीन काल से लेकर आज तक वह भारतीय आलोचना का मानदण्ड बना हुआ है। जीवन की गति यह स्पष्ट कर देती है कि रस जीवन का सार है और समस्त मानवमात्र का जीवन रस के लिए है। यह निर्विवाद सत्य है कि रस जीवन के लिए आवश्यक तत्व है, इसी को प्रसाद जी ने अपने शब्दों में व्यक्त किया है—

काम मंगल से मण्डित श्रेय,
सर्ग इच्छा का है परिणाम।

दूसरे अर्थों में लोक में प्रचलित खाद्य पदार्थों में लवण, तिक्त, मधुर, कषायादि षड्‌रस तथा सांगीतिक रस अथवा यत्र तत्र अन्यत्र प्राप्त होनेवाले रस जीवन के लिए आवश्यक तत्व हैं। संभवतः भरतमुनि ने रस शब्द की व्यापकता एवं महत्ता का अनुभव करके ही इस कारिका का निर्माण किया होगा —

"नहिं... रसादृते कश्चिदपि अर्थः प्रवर्तते।"

वस्तुतः तथ्य तो यह है कि जीवन के सुव्यवस्थित निर्माण के लिए रस अनिवार्य है, रस से रहित जीवन ही नहीं रह जाता है चाहे वह आध्यात्मिक जगत हो अथवा लौकिक जगत। जीवन की गति भी रस के कारण ही है। जिस प्रकार नाना प्रकार पदार्थों से तैयार किए गए व्यंजन में रस की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार अनेक प्रकार के भावों से रस की निष्पत्ति होती है। जिस प्रकार अनेक प्रकार के व्यंजनों से युक्त अन्न का भोग करते हुए स्वस्थ पुरुष आनन्द की प्राप्ति करते हैं उसी

उसी प्रकार विभाव अनुभाव और संचारी भावों का आस्वादन करते हुए सहृदयजन रस का आनन्द लेते हैं। प्रथम आस्वाद की प्रक्रिया स्थूल है और दूसरे की सूक्ष्म।

रस शब्द रस धातु और अ प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है। अतएव रस शब्द की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है – 'रस्यते आस्वाद्यते रसः' अर्थात वह जो आस्वादित किया जाये।

आचार्य भरत के अनुसार हम कह सकते हैं कि विभाव अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है –

'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रस निष्पत्तिः'

रस की निष्पत्ति नाना भावों के उपागम से होती है 'नानाभावोपगमाद्रसनिष्पत्तिः'।

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में रस के स्वरूप को व्यक्त करते हुए लिखा है कि सत्वोद्रेक रस का हेतु है। यही नहीं वह तो अखण्ड, स्वप्रकाशानन्द, चिन्मय, वेद्यान्तर, स्पर्शशून्य, ब्रह्मास्वाद सहोदर और लोकोत्तर चमत्कार से युक्त होता है –

सत्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्द – चिन्मयः।
वेद्यान्तर स्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः।
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कैश्चित्प्रमातृभिः।
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः।

आशय यह है कि रस का आस्वादन सहृदय को ही संभव है। रस की निष्पत्ति सत्वगुण की अधिकता में होती है। रस का आस्वादन सदा आनन्दमय ही होता है और यह आनन्द अखण्ड चिन्मय तथा वेद्यान्तर स्पर्शशून्य है। अखण्ड से यहाँ आशय यह है कि इसमें विभाव, अनुभाव एवं स्थायी और संचारी आदि भावों की अलग-अलग अथवा अखण्ड अनुभूति नहीं होती है अपितु सभी की समन्वित अनुभूति होती है। यही नहीं इस अनुभूति में परिणाम का भेद भी नहीं होता है। इस समय किसी अन्य विषय की चेतना भी नहीं होती है। और तीसरे यह अनुभूति चिन्मय और बुद्धिमूलक होती है। इसका आशय यह है कि इस अनुभूति में ऐन्द्रिकता नहीं

होती है। डॉ० नगेन्द्र ने काव्यानन्द के संबंध में पाँच सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं —

(1) काव्य का आनन्द प्रत्यक्षतः ऐन्द्रित आनन्द है। इस मत के प्रवर्तक प्लेटो हैं। इनके अनुसार काव्य या कला से प्राप्त आनन्द ठीक वैसा ही है जैसा कि सर्कस देखने से मिलता है।

(2) काव्य का आनन्द आत्मिक आनन्द का ही रूप है। आत्मा सहज सौन्दर्यरूप है – सहज आनन्दरूप है। काव्य उसी का उच्छलन है, अतः वह स्वभावतः आध्यात्मिक अनुभूति है। अभिनव, भम्मट और जगन्नाथ का यही मत है।

(3) काव्यानन्द कल्पना का आनन्द है अर्थात् मूल वस्तु और उसके काव्यांकित रूप की तुलना से प्राप्त आनन्द है। यह अरस्तू से प्रेरित एडिसन का मत है। बीसवीं शती में क्रोचे ने इसी को दार्शनिक रूप में प्रस्तुत कर काव्यानन्द को सहानुभूति का आनन्द माना है।

(4) काव्य का आनन्द सभी प्रकार के लौकिक और आध्यात्मिक अनुभवों से भिन्न एक प्रकार का विलक्षण आनन्द है जो सर्वथा निरपेक्ष है। यह सिद्धांत बहुत पुराना है। यद्यपि यह सिद्धांत कुछ-कुछ रहस्यवादी प्रकृति में रंगा हुआ है और रिचर्ड्स ने इस पर कांट तथा हिगेल आदि का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी माना है।

सारतः कहा जा सकता है कि रस ही काव्य की आत्मा है।